

[2009] 8 एस. सी. आर. 309

भारत प्रसाद और अन्य

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

(2009 की आपराधिक अपील संख्या 952)

06 मई 2009

[डॉ. अरिजीत पासायत और अशोक कुमार गांगुली, न्यायमूर्तिगण]

बिहार किरायेदारी अधिनियम - धारा 48ई (13) के तहत कार्यवाही शुरू की गई और अपीलकर्ताओं के पक्ष में समाप्त हुई, उनके बटाएदार के रूप में अधिकारों को बरकरार रखते हुए - ऐसी कार्यवाही अंतिम हो गई - धारा 144/145 दंड प्रक्रिया संहिता का प्रावधान तब लागू नहीं था - धारा 48ई (13) बटाएदारी अधिकारों पर दीवानी और आपराधिक न्यायालयों की शक्ति को बाहर करती है - यह वितरणात्मक न्याय के सिद्धांत के अनुरूप है - न्यायालयों को ऐसे सामाजिक-आर्थिक कानून के प्रावधानों की व्याख्या इस तरह से करनी चाहिए जो इसके उद्देश्य को आगे बढ़ाए न कि उसे विफल करे - कानूनों की व्याख्या - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 5, 144, 145 - वितरणात्मक न्याय का सिद्धांत।

विवादित भूमि को 1920 में गिरवी रखा गया था। भूमि के स्वामी ने 1943 में पंजीकृत विक्रय विलेख द्वारा भूमि बेच दी। गिरवी छुड़ाई नहीं गई और गिरवीदार विवादित भूमि पर कब्जा बनाए रखा। गिरवीदार ने अपीलकर्ताओं और उनके भाइयों को बटाडार के रूप में खेती करने के लिए भूमि दे दी। 1977 में, गिरवीदार ने अपीलकर्ताओं को बटाडार भूमि से बेदखल करने का प्रयास किया, जिसके बाद बटाडारों ने मुकदमा दायर किया। उक्त मुकदमा अपीलकर्ताओं के पक्ष में तय हुआ। उस आदेश के विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की गई और वह अंतिम हो गया। इसके बाद बटाडारों ने विवादित भूमि सहित अपनी-अपनी भूमि संपत्तियों का आपस में बंटवारा कर लिया।

दोनों पक्षों के बीच दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144/145 के तहत कई कार्यवाही शुरू की गई। अंततः अपीलकर्ताओं ने उचित प्राधिकारी के समक्ष किरायेदारी का मामला दायर करने का दावा किया। सभी वादों की एक साथ सुनवाई हुई और अंचल अधिकारी ने पाया कि अपीलकर्ता विवादित भूमि के किरायेदार थे और उन्हें अपने नाम पर ज़माबंदी बनाने के लिए धन जमा करने का निर्देश दिया, जिसे उन्होंने जमा कर दिया। उत्तरदाताओं ने उन कार्यवाही और दोनों पक्षों के बीच शुरू की गई विभिन्न आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए आपराधिक विविध मामला दायर किया, जिसे खारिज कर दिया गया। उस आदेश को चुनौती देते हुए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय में याचिका दायर की गई। उच्च न्यायालय ने कार्यवाही को रद्द करने से इनकार कर दिया। अतः यह अपील दायर की गई है।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1. उच्च न्यायालय ने बिहार किरायेदारी अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के दायरे पर विचार नहीं किया। [कंडिका 20] [316-जी-एच]

बद्री यादव बनाम सत नारायण दास और अन्य (1993) अनुपूरक (2) एससीसी 347 पर अवलंबन किया गया।

2. इस वाद में स्पष्ट निष्कर्ष निकाला गया कि अपीलकर्ता बटाईदार थे। यह निष्कर्ष बिहार किरायेदारी अधिनियम के प्रावधान के तहत निकाला गया, जो एक विशेष कानून है। उक्त अधिनियम की धारा 48 ई के प्रावधान बटाईदार के अधिकारों की जांच के लिए एक पूर्ण तंत्र प्रदान करते हैं और कुछ संरक्षण भी प्रदान करते हैं। धारा 49 सी किरायेदारों के पक्ष में सृजित ऐसे अधिकारों के हस्तांतरण पर कुछ प्रतिबंध भी लगाती है। अतः धारा 48 ई और धारा 49 सी के प्रावधान एक दूसरे के पूरक हैं। [कंडिका 21] [317-ए-सी]

3. अधिनियम की धारा 48 ई के प्रावधानों को अधिनियमित करने का विधायी उद्देश्य रैयतों और उप-रैयतों के बीच विवादों का यथासंभव सौहार्दपूर्ण ढंग से निपटारा सुनिश्चित करना है, और इसके लिए उक्त अधिनियम की धारा 48 ई के अंतर्गत विस्तृत तंत्र का प्रावधान किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उक्त अधिनियम एक विशेष और स्थानीय कानून है, क्योंकि यह बिहार राज्य तक ही सीमित है। यदि उक्त अधिनियम की धारा 48 ई (13) के प्रावधानों को धारा 5 दंड प्रक्रिया संहिता के संदर्भ में पढ़ा जाए, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि धारा 5 दंड प्रक्रिया संहिता का प्रभाव यह है कि ऐसे विशेष कानून के अंतर्गत आने वाले सभी वादों में दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। [कंडिका 22 और 24] [317-सी-डी; 318-ए-बी]

अजमेर सिंह और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य, 1987 (3) एससीसी 340 और *मारू राम बनाम भारत संघ और अन्य* (1981) 1, एससीसी 107 पर भरोसा किया गया।

4. उक्त अधिनियम की धारा 48 ई की उपधारा 13 यह स्पष्ट करती है कि समाहर्ता द्वारा उपधारा (1) के तहत कार्यवाही शुरू किए जाने के बाद किसी भी दीवानी या आपराधिक न्यायालय को विवाद के विषय पर कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा। यह स्वीकार किया जाता है कि धारा 48 ई के तहत एक कार्यवाही शुरू की गई थी और यह अपीलकर्ताओं के पक्ष में समाप्त हुई, जिसमें उनके बटाईदार के रूप में अधिकारों को बरकरार रखा गया था। उक्त निर्णय अंतिम हो गया। हालांकि, उपधारा 48 ई (13) में यह प्रावधान है कि इस उपधारा में कुछ भी आपराधिक न्यायालय की उस शक्ति को प्रभावित नहीं करेगा जिसके तहत वह समाहर्ता द्वारा कार्यवाही के अंतिम निपटारे तक शांति भंग को रोकने के लिए आवश्यक कार्रवाई कर सकता है। [कंडिका 26 और 28] [318-बी-एफ]

5. यहाँ, कार्यवाही अंतिम हो जाने और अपीलकर्ताओं के अधिकारों की घोषणा हो जाने के बाद, बार-बार धारा 144 और 145 दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का हवाला देकर अपीलकर्ताओं द्वारा बटादारी कार्यवाही में प्राप्त अधिकारों को बाधित करने का प्रयास किया

गया। लेकिन धारा 48 ई(13) के मुख्य प्रावधान पक्षों के बटादारी अधिकारों की रक्षा के लिए बनाए गए थे और इसीलिए यह ऐसे अधिकारों पर दीवानी और आपराधिक न्यायालयों की शक्ति को सीमित करता है। यह वितरणात्मक न्याय के सिद्धांत के अनुरूप है। विभिन्न राज्यों के विभिन्न भूमि सुधार कानूनों में भी इसी प्रकार के प्रावधान किए गए हैं। न्यायालयों को ऐसे सामाजिक-आर्थिक कानूनों के प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार करनी चाहिए जिससे उनका उद्देश्य पूरा हो, न कि विफल हो। [कंडिका बी 29] [318-एच; 319-ए-सी]

6. इस वाद में, धारा 48 ई(1) के तहत बटाएदारी की कार्यवाही समाप्त हो चुकी थी और कोई लंबित कार्यवाही नहीं थी। इसलिए, धारा 48 ई(13) का परंतुक लागू नहीं होता। उक्त अधिनियम की धारा 48 ई(13) के मुख्य प्रावधान के मद्देनजर, स्पष्ट रूप से अधिकार समाप्त होने के कारण आपराधिक न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं किया जा सकता। [कंडिका 31] [319-ई]

कुंजबिहारी बनाम बैरम और अन्य (2006) 11 एससीसी 66 का संदर्भ दिया गया।

7. यदि प्रतिवादी बटाएदारी कार्यवाही में दिए गए निष्कर्षों से असंतुष्ट थे, तो उन्हें अपील करने का वैधानिक अधिकार था। ऐसा किए बिना, धारा 144/145 की कार्यवाही के छल और हेराफेरी से बटाएदारी कार्यवाही के प्रभाव को समाप्त नहीं किया जा सकता। वाद के तथ्यों में, ऐसी कार्यवाही का दुरुपयोग है। उच्च न्यायालय ने उनके वाद में शामिल कानूनी मुद्दों को सही परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा और न ही उक्त अधिनियम की धारा 48 ई या उपधारा (13) के धारा 145 कार्यवाही पर पड़ने वाले प्रभाव पर विचार किया। [कंडिका 33] [320-ए-बी]

नजीर संदर्भ:

(1993) अनुपूरक (2) एससीसी 347	भरोसा किया गया	कंडिका 20
1987 (3) एससीसी 340	भरोसा किया गया	कंडिका 24
(1981) 1 एससीसी 107	भरोसा किया गया	कंडिका 25

(2006) 11 एससीसी 66

भरोसा किया गया

कंडिका 32

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2009 की आपराधिक अपील संख्या 952।

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 23.05.2007 के निर्णय एवं आदेश के द्वारा, 2005 की आपराधिक विविध मामला संख्या 28219 में।

अपीलकर्ता की ओर से स्मैशर सिंह, एस. सागर, ए. नंदन और टी. महिपाल।

उत्तरदाताओं की ओर से पी.एस. मिश्रा, गोपाल सिंह, मनीष कुमार, अनुज प्रकाश, चंदन कुमार, रवि सी. प्रकाश, उपेंद्र मिश्रा, डी.के. झा, डी.के. पांडे (बिजन कुमार घोष की ओर से) और विष्णु शर्मा।

न्यायालय का निर्णय जिनके द्वारा सुनाया गया।

गांगुली, न्यायमूर्ति. 1. छुट्टी दे दी गई।

2. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत पारित उच्च न्यायालय के दिनांक 23.5.2007 के आदेश को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है।

3. उस आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने तीसरे अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, मोतिहारी द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 326/1992 में दिनांक 10.2.2005 को पारित आदेश को निरस्त करने से इनकार कर दिया, जिसके द्वारा कार्यपालक दण्डाधिकारी, रक्सौल द्वारा वाद संख्या 548(एम)/1991 में दिनांक 27.7.1992 को पारित आदेश की पुष्टि की गई थी।

4. उक्त आदेश दिनांक 27.7.1992 द्वारा, कार्यपालक दण्डाधिकारी ने संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही में विपक्षी के पक्ष में कब्जा घोषित किया। आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

"मैं उक्त भूमि पर प्रथम पक्ष के कब्जे की घोषणा करता हूँ जब तक कि सक्षम न्यायालय द्वारा उन्हें बेदखल न कर दिया जाए और दूसरे पक्ष को आदेश दिया जाता है कि वे प्रथम पक्ष के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप न करें।"

5. वाद के मुख्य तथ्य इस प्रकार हैं:

6. विवादित भूमि गम्भरिया कला ग्राम, थाना दरपा, जिला मोतिहारी में खाता संख्या 289 के अंतर्गत प्लॉट संख्या 1853 में से 1 कट्ठा 8 धुरा है। यह भूमि मूल रूप से छपरा जिले के आमनाउर ग्राम के राम लगन तिवारी की थी।

7. अपीलकर्ताओं का कहना है कि राम लगन तिवारी ने उक्त भूमि को पूर्वी चंपारण जिले के केशरिया थाना, गांव भोपतपुर बाझिया ग्राम के जगदीश प्रसाद सिंह पिता तापसी राय को 60 वर्षों की अवधि के लिए गिरवी रख दिया था।

8. आगे यह तर्क दिया गया है कि लगभग 9.11.1943 को राम लगन तिवारी ने पूर्वी चंपारण जिले के दरपा थाना क्षेत्र के लाहाड़िया गांव के जमादार राय उर्फ जमादार भगत को पंजीकृत विक्रय विलेख द्वारा भूमि बेच दी। न तो जमादार राय उर्फ जमादार भगत और न ही राम लगन तिवारी ने गिरवी छोड़ाई, जिसके परिणामस्वरूप जगदीश प्रसाद सिंह विवादित भूमि पर कब्जा बनाए रहे। उक्त जगदीश प्रसाद सिंह, गिरवीदार ने उक्त कृषि भूमि अपीलकर्ताओं और उनके भाइयों को बटादार के रूप में खेती करने के लिए दे दी।

9. अपीलकर्ता का कहना है कि उन्होंने जय बिहार साह के साथ उक्त भूमि पर कब्जा कर लिया और बटादार के रूप में उस पर खेती की।

10. आगे यह तर्क दिया गया है कि 18.8.1977 को जगदीश प्रसाद सिंह ने अपीलकर्ताओं और जय बिहार साह को बटाई भूमि से बेदखल करने का प्रयास किया, जिसके बाद अपीलकर्ता संख्या 2 - लक्ष्मण प्रसाद ने सिकमी बटाई मामला संख्या 480/1975 और जय बिहार साह ने सिकमी बटाई मामला संख्या 257/1976 एल.आर.डी.सी. के समक्ष दायर किया। दोनों सिकमी बटाई वादों में जगदीश प्रसाद सिंह के विरुद्ध और अपीलकर्ताओं के पक्ष में निर्णय हुआ।

11. उक्त आदेश का अंतिम भाग इस प्रकार है:

“.....विभिन्न व्यक्तियों के बयानों और जांच प्रतिवेदन से यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो गया है कि श्री लक्ष्मण प्रसाद साह, बटाईदार, अपने परिवार के सदस्यों के साथ 30 वर्षों से अधिक समय से इस भूमि पर बटाईदार के रूप में खेती कर रहे थे और फसल का हिस्सा श्री जगदीश प्रसाद साह को शेष 1 बीघा भूमि में वितरित करते थे, लेकिन आज भी 2 बीघा और 2 कट्ठा भूमि उनके शांतिपूर्ण कब्जे में है और कानूनी रूप से श्री लक्ष्मण प्रसाद साह को 2 बीघा और 2 कट्ठा भूमि पर सिकरी अधिकार प्राप्त है, जो एकड़ और डेसिमल के बराबर है।...”

12. उक्त आदेश के विरुद्ध कोई अपील नहीं की गई। उक्त आदेश अंतिम हो चुका है।

13. अपीलकर्ताओं का यह भी कहना है कि लक्ष्मण प्रसाद और उनके दो भाई, राम चंद्र प्रसाद और भरत प्रसाद, आपस में अलग हो गए और उन्होंने विवादित भूमि सहित पूरी भूमि का आपस में बंटवारा कर लिया।

14. यह आरोप है कि 26.6.1979 को मूल भूस्वामी राम लगन तिवारी के क्रेता, अर्थात् जमादार राय उर्फ जमादार भगत ने पंजीकृत विक्रय विलेख द्वारा पूरी भूमि धरमण प्रसाद और उनके तीन पुत्रों, शेष नाथ प्रसाद, प्रमोद कुमार और बिनय कुमार के नाम बेच दी।

15. यह आरोप है कि 26.12.1981 को लक्ष्मण प्रसाद ने धरमण प्रसाद और उनके पुत्रों के नाम सिकमी बटाई के लिए एक "एजाबनामा" निष्पादित किया।

16. इसके बाद, संहिता की धारा 144 के तहत कार्यवाही शुरू की गई और गम्हरी कला पंचायत के सरपंच ने कुल 3 बीघा, 22 कट्ठा, 5 धुर भूमि में से केवल 2 बीघा, 2 कट्ठा भूमि पर अपीलकर्ताओं के खिलाफ ऐसी कार्यवाही शुरू करने की सिफारिश की।

17. हालांकि, उक्त कार्यवाही को माननीय उप-विभागीय दण्डाधिकारी द्वारा 9.1.1984 को पारित एक आदेश द्वारा भूमि के कुछ भाग के संबंध में समाप्त कर दिया गया था और यह निर्देश दिया गया था कि कार्यवाही केवल 1 बीघा, 8 कट्ठा भूमि पर ही जारी रहेगी तथा

संहिता की धारा 144 के अंतर्गत कार्यवाही को संहिता की धारा 145 में परिवर्तित कर दिया गया था।

18. उक्त कार्यवाही में, अपीलकर्ताओं ने 1920 से शुरू होने वाले इतिहास का उल्लेख करते हुए कारण बताओ नोटिस दाखिल करने का दावा किया है। पुलिस प्रतिवेदन के आधार पर, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अंतर्गत एक अलग कार्यवाही शुरू की गई थी, जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अंतर्गत कार्यवाही में परिवर्तित कर दिया गया था और उक्त कार्यवाही में उत्तरदाताओं ने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 333/1984 दायर की थी, जिसे माननीय उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया था।

19. ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों पक्षों के बीच दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के तहत विभिन्न कार्यवाही शुरू की गई थी। अंततः अपीलकर्ताओं ने उचित प्राधिकारी के समक्ष बटाएदारी (किरायेदार) वाद संख्या 10/1995-96, 11/1995-96 और 12/1995-96 दायर किए। सभी वादों की एक साथ सुनवाई हुई और पक्षों को सुनने के बाद अंचल अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अपीलकर्ता विवादित भूमि के किरायेदार हैं और उन्हें अपने नाम पर जमाबंदी बनाने के लिए धन जमा करने का निर्देश दिया, जिसे उन्होंने जमा कर दिया। इस दावे के समर्थन में, अपीलकर्ताओं ने बटाएदारी वाद संख्या 10/1995-96 में जारी किए गए दिनांक 13.06.1995 और 15.10.1995 के दो आदेशों का हवाला दिया। इस कार्यवाही के मद्देनजर, उत्तरदाताओं ने उन कार्यवाही को रद्द करने के लिए आपराधिक विविध मामला दायर किया और दोनों पक्षों के बीच विभिन्न आपराधिक कार्यवाही शुरू की गई। अंततः, मोतिहारी के तृतीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (ई.सी.) की न्यायालय में, अपीलकर्ताओं द्वारा कार्यपालक दण्डाधिकारी द्वारा दिनांक 27.07.1992 को पारित आदेश को चुनौती देते हुए आपराधिक पुनरीक्षण याचिका दायर की गई, जिसे खारिज कर दिया गया। उस आदेश को चुनौती देते हुए, उच्च न्यायालय में धारा 482 के तहत याचिका दायर की गई। उस याचिका पर उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को इस न्यायालय में चुनौती दी गई है।

20. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने बिहार किरायेदारी अधिनियम (जिसे आगे "उक्त अधिनियम" कहा गया है) के प्रासंगिक प्रावधानों और आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के दायरे पर विचार नहीं किया। *बद्री यादव बनाम सत नारायण दास और अन्य* - 1993 अनुपूरक (2) एससीसी 347 में यह माना गया है कि कोई व्यक्ति बटाईदार है या नहीं, यह "पूरी तरह से तथ्यात्मक जांच और वाद के अभिलेख" पर निर्भर करता है।

21. इस वाद में स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि अपीलकर्ता बटाईदार हैं। यह निष्कर्ष उक्त अधिनियम के प्रावधानों के तहत निकाला गया है, जो एक विशेष कानून है। उक्त अधिनियम की धारा 48 ई के प्रावधान बटाईदार के अधिकारों की जांच के लिए एक पूर्ण तंत्र प्रदान करते हैं और कुछ संरक्षण भी प्रदान करते हैं। धारा 49 सी भी ऐसे अधिकारों के हस्तांतरण पर कुछ प्रतिबंध लगाती है जो किरायेदारों के पक्ष में सृजित किए गए हैं। अतः धारा 48 ई और धारा 49 सी के प्रावधान एक दूसरे के पूरक हैं।

22. उक्त अधिनियम की धारा 48 ई के प्रावधानों को अधिनियमित करने का विधायी उद्देश्य रैयतों और उप-रैयतों के बीच विवादों का यथासंभव सौहार्दपूर्ण ढंग से निपटारा सुनिश्चित करना है, और इसके लिए उक्त अधिनियम की धारा 48 ई के अंतर्गत विस्तृत प्रक्रिया का प्रावधान किया गया है। इसी विधायी योजना के अनुरूप धारा 48 ई (13) में निम्नलिखित प्रावधान किया गया है:

"इस अधिनियम में स्पष्ट रूप से दिए गए प्रावधानों के अलावा, समाहर्ता द्वारा उपधारा (1) के अंतर्गत कार्यवाही प्रारंभ किए जाने के बाद किसी विवाद के विषय पर किसी दीवानी या आपराधिक न्यायालय का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा:

बशर्त कि इस उपधारा में कोई बात आपराधिक न्यायालय की उस शक्ति को प्रभावित नहीं करेगी जिसके तहत वह समाहर्ता द्वारा कार्यवाही के अंतिम निपटारे तक शांति भंग को रोकने के लिए आवश्यक कार्रवाई कर सकता है।"

23. इस संदर्भ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 5 पर भी ध्यान दिया जा सकता है, जिसमें निम्नलिखित प्रावधान है:

"संहिता में निहित कोई भी बात, विपरीत विशिष्ट प्रावधान के अभाव में, किसी विशेष या स्थानीय कानून, या किसी अन्य कानून द्वारा प्रदत्त किसी विशेष अधिकार क्षेत्र या शक्ति, या निर्धारित किसी विशेष प्रक्रिया के स्वरूप को प्रभावित नहीं करेगी।"

24. इस बात में कोई संदेह नहीं है कि उक्त अधिनियम एक विशेष और स्थानीय कानून है, क्योंकि यह बिहार राज्य तक ही सीमित है। यदि हम उक्त अधिनियम की धारा 48 ई (13) के प्रावधानों की तुलना उक्त संहिता की धारा 5 से करें, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 5 का प्रभाव यह है कि ऐसे विशेष कानून के अंतर्गत आने वाले सभी वादों में दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। [देखें *अजमेर सिंह और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य* - 1987 (3) एसएससी 340 (कंडिका 7 पृष्ठ 343)]।

25. इसी प्रकार, संहिता की धारा 5 की व्याख्या करते हुए, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने *मारू राम बनाम भारत संघ और अन्य* [(1981) 1 एससीसी 107] में कहा:

"यदि उसी क्षेत्र को कवर करने वाला कोई विशेष या स्थानीय कानून मौजूद है, तो यह बाद वाला कानून मान्य होगा और प्रभावी होगा।"

26. उक्त अधिनियम की धारा 48 ई की उपधारा 13 यह स्पष्ट करती है कि समाहर्ता द्वारा उपधारा (1) के तहत कार्यवाही शुरू किए जाने के बाद किसी भी दीवानी या आपराधिक न्यायालय को विवाद के विषय पर कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा।

27. इस वाद में, यह स्वीकार किया जाता है कि धारा 48 ई के तहत कार्यवाही शुरू की गई थी और यह अपीलकर्ताओं के पक्ष में समाप्त हुई, जिसमें उनके बटाईदार के रूप में अधिकारों को बरकरार रखा गया था। उक्त निर्णय अंतिम हो चुका है।

28. हालांकि, उपधारा 48 ई (13) में यह परंतुक है कि इस उपधारा में कुछ भी आपराधिक न्यायालय की उस शक्ति को प्रभावित नहीं करेगा जिसके तहत वह समाहर्ता द्वारा

कार्यवाही के अंतिम निपटारे तक शांति भंग को रोकने के लिए आवश्यक कार्रवाई कर सकता है।

चूंकि इस वाद में धारा 48 ई के तहत कार्यवाही का अंतिम निर्णय हो चुका है, इसलिए इस परंतुक का उपयोग नहीं किया जा सकता है।

29. यहां, कार्यवाही अंतिम हो जाने और अपीलकर्ताओं के अधिकारों की घोषणा हो जाने के बाद, बार-बार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 और 145 के प्रावधानों का हवाला देकर अपीलकर्ताओं द्वारा बटादारी कार्यवाही में प्राप्त अधिकारों को बाधित करने का प्रयास किया गया है। लेकिन धारा 48 (13) के मुख्य प्रावधान पक्षों के बटादारी अधिकारों की रक्षा के लिए बनाए गए हैं और इसीलिए यह दीवानी और आपराधिक न्यायालयों की शक्ति को ऐसे अधिकारों से बाहर रखता है। यह वितरणात्मक न्याय के सिद्धांत के अनुरूप है। विभिन्न राज्यों के भूमि सुधार कानूनों में भी इसी प्रकार के प्रावधान किए गए हैं। न्यायालयों को ऐसे सामाजिक-आर्थिक कानूनों के प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार करनी चाहिए जिससे उनका उद्देश्य पूरा हो, न कि विफल हो।

30. उत्तरदाताओं का एकमात्र तर्क यह है कि कुछ अपीलकर्ताओं ने एज़ाबनामा द्वारा उत्तरदाताओं के पक्ष में अपने अधिकार त्याग दिए थे। यह ध्यान देने योग्य है कि उक्त अधिनियम की धारा 49C के तहत उप-रैयत द्वारा अधिकारों के हस्तांतरण पर प्रतिबंध है और यदि ऐसा हस्तांतरण किया जाता है, तो वह शून्य है। इस प्रकार के हस्तांतरण पर जोर देने के अलावा, जो स्पष्ट रूप से कानून का उल्लंघन है, उत्तरदाताओं के विद्वान वकील द्वारा कोई अन्य तर्क नहीं दिया गया।

31. इस वाद में, धारा 48(1)(ई) के तहत बटादारी की कार्यवाही समाप्त हो चुकी थी और कोई लंबित कार्यवाही नहीं थी। इसलिए, धारा 48 ई(13) का परंतुक लागू नहीं होता है। उक्त अधिनियम की धारा 48(13) के मुख्य प्रावधान के मद्देनजर, स्पष्ट अपवर्जन के कारण आपराधिक न्यायालय के क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

32. *कुंजबिहारी बनाम बैरम और एक अन्य* (2006) 11 एससीसी 66 के वाद में, इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने यह माना है कि जहां पक्षों के अधिकारों पर किसी अन्य मंच द्वारा पहले ही निर्णय लिया जा चुका है, वहां पक्षों को उस निर्णय का सम्मान करना चाहिए। ऐसी स्थिति में, निर्णय को पलटने के लिए धारा 145 के तहत कार्यवाही शुरू नहीं की जानी चाहिए। उस वाद में, उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत कार्यवाही में धारा 145 की कार्यवाही को रद्द करने से इनकार कर दिया था। यहां भी यही किया गया है। हालांकि, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को रद्द करते हुए और धारा 145 की कार्यवाही को समाप्त करने का निर्देश देते हुए अपील को स्वीकार कर लिया।

33. इस वाद में, न्यायालय की राय है कि यदि प्रतिवादी बटादारी कार्यवाही में दिए गए निर्णयों से असंतुष्ट हैं, तो उन्हें कानून के अनुसार अपील करने का वैधानिक अधिकार प्राप्त है। ऐसा किए बिना, धारा 144/145 की कार्यवाही के छल और हथकंडे से बटादारी कार्यवाही के प्रभाव को समाप्त नहीं किया जा सकता। इस वाद के तथ्यों के आधार पर, ऐसी कार्यवाही का एक दुरुपयोग है।

34. ऊपर बताए गए कारणों से, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस वाद में शामिल कानूनी मुद्दों को उनके सही परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा है और न ही उक्त अधिनियम की धारा 48 ई या उपधारा (13) के 145 कार्यवाही पर प्रभाव पर विचार किया है।

35. अतः, हम उच्च न्यायालय के आदेश और कार्यवाही संख्या 145 को रद्द करते हैं। अपील स्वीकार की जाती है। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

डी जी।

अपील की अनुमति दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता।

समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।